ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL**04292**
RNI REG. NO. UPBIL/**2014/66218** **PP. No.- 60-62**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-20, No.- I, Issues-39, YEAR- Jan.-March 2026

आपराधिक व्यवहार के जनन में उत्पीड़ित व्यक्तियों की भूमिका

डॉ0 प्रमोद कुमार

शिक्षक–समाजशास्त्र, पी०जी०टी० (11–12), उच्च माध्यमिक विद्यालय, कुतलीपुर, खिजरसराय– गया (बिहार), भारत

Received-14.01.2026, Revised-21.01.2026, Accepted-28.01.2026 E-mail:aaryvart2013@gmail.com

सारांशः अपराधिक कानून, कानून प्रवर्तन, न्यायालय की कार्यप्रणालियों तथा न्याय का प्रशासन प्रायः मात्र अपराधिक कृत्य के कर्त्ता पर ही संकेन्द्रित होता है। जब किसी अपराध के सन्दर्भ में पुलिस को सूचना दी जाती है, वे अपराधकर्त्ता की तलाश करना प्रारम्भ कर देती है। वे अपराधकर्ता अथवा संदिग्ध व्यक्ति को गिरफ्तार करते हैं। पुलिस अपराधकर्त्ता की खोज के सन्दर्भ में उत्पीड़ित व्यक्तियों की खोज करती है। अपराधकर्ता की खोज कर उसके अपराधिक कृत्य के सन्दर्भ में अपना मत देते हुए न्यायालय को उसके अपराध को सिद्ध करने के लिए तथा आवश्यक दाण्डिक कार्यवाही हेतु सूचना प्रदान करती है। उत्पीड़ित व्यक्ति अपराधी व्यक्ति के अपराधिक कृत्यों के सन्दर्श में राज्य के लिये साक्षी के रूप में प्रस्तुत होता है। अपराधी व्यक्ति न्यायालय द्वारा सिद्ध दोष अपराधी घोषित किया जा सकता है और दाण्डिक संस्थाओं, जैसे कारागार में भेजा जा सकता है। न्यायालय द्वारा उसे उसकी अपराध की गम्भीरता के अनुसार ही दण्डित किया जाता है। न्यायालय द्वारा उसे अर्थदण्ड भी दिया जा सकता है अथवा परिवीक्षा पर छोड़ा भी जा सकता है। अपराधिक व्यक्तियों के बारे में न्यायालय सांख्यिकी रखते हैं, गिरफ्तरी की सांख्यिकी पुलिस द्वारा रखी जाती है और दाण्डिक संस्थाओं द्वारा अपराधियों की मुक्ति की सांख्यिकी रखी जाती है। अतः अपराधशास्त्र मुख्यतः अपराधियों और उनके व्यवहार के निवारण, नियन्त्रण तथा उपचार का अध्ययन है!

कुंजीभूत शब्द– आपराधिक व्यवहार, अपराधिक कानून, कानून प्रवर्तन, न्यायालयीय कार्यप्रणाली, अपराधकर्ता, संदिग्ध व्यक्ति, न्यायालय

निस्सन्देह, अधिकांश अपराधिक कृत्यों के बारे में लोगों को कोई जानकारी नहीं हो पाती है क्योंकि सम्पन्न राजनीतिक एवं उच्चस्थ व्यक्तियों द्वारा किये गये अपराधिक कृत्यों के बारे में पुलिस को कोई जानकारी ही नहीं होती। राजनीति के गन्दे खेल में सम्मिलित अखाड़िये, गुंडों, बदमाशों, लुटेरों और डाकुओं के बल पर जघन्य से जघन्य अपराध करते–कराते हैं और लोकतन्त्र के नाम पर कलंक लगाते हैं, किन्तु उनके अपराधिक कृत्यों के प्रति समाज की आँखें बन्द रहती हैं।

अन्य देशों की भाँति भारत में भी अपराधिक कृत्यों की संख्या सुरसा के मुँह समान बढ़ती जा रही है। इसीलिए समाज में उत्पीड़ित व्यक्तियों की संख्या भी उसी अनुपात में बढ़ती जा रही है। समाज में अपराधियों के प्रति लोगों की सामान्यतः नकारात्मक दृष्टि होती है, जबकि उत्पीड़ित व्यक्तियों के प्रति सकारात्मक दृष्टि होती है। अपराधिक व्यक्तियों को घृणा व हेय की दृष्टि से देखा जाता है, जबकि उत्पीड़ित व्यक्तियों को स्नेह व सहानुभूति की दृष्टि से देखा जाता है। परन्तु उत्पीड़ित व्यक्ति भी कभी–कभी बहुत ही खतरनाक एवं अपराधी प्रवृत्ति के व्यक्ति होते हैं और अपराधिक कृत्य के घटने में महनीय भूमिका अदा करते हैं। अपने अपराधिक कृत्यों को छिपाने का प्रयास करते हैं। जिस प्रकार एक अपराधी सदैव दोषी या अपचारी ही नहीं होता, उसी प्रकार एक उत्पीड़ित व्यक्ति भी सदैव निर्दोष या अनाचारी नहीं होता।

रूमानिया के एक बैरिस्टर जिनका नाम मेन्डेलसोन था (जो बाद में इजरायल के निवासी हो गये थे) ने सर्वप्रथम उत्पीड़ित–कर्त्ता सम्बन्ध का अपराधशास्त्रीय साहचर्य प्रस्तुत किया जिसे उन्होंने "दाण्डिक युग्म" कहकर सम्बोधित किया। मेन्डेलसोन ने द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरान्त "अपराधशास्त्र में बलात्कार" विषयक एक कामयाब अध्ययन किया। उनका यह अध्ययन जैव–मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उत्पीड़ित एवं अपराधी व्यक्ति के सम्बन्धों का बलात्कार और कुछ अंशों तक नैतिकता के विरुद्ध अन्य अपराधों के सन्दर्भ में प्रतिपादित हुआ। मेन्डेलसोन के अनुसार उत्पीड़ित व्यक्ति की प्रतिरोध शक्ति निम्नलिखित परिस्थितियों में कम भी हो सकती है :

1. अभियुक्त एवं उत्पीड़ित व्यक्ति के मध्य विद्यमान पारिवारिक, सत्तावादी या संस्तरणात्मक सम्बन्ध,
2. उत्पीड़ित व्यक्ति का ज्वालामुखीय स्वभाव, जो विवेक क्षमता को धुंधला बना दे,
3. उत्पीड़ित व्यक्ति का व्यभिचारी सामाजिक पर्यावरण,
4. उत्पीड़ित व्यक्ति की तुलना में अभियुक्त के सामाजिक परिवेश की उच्चता।

प्रो. वान हेन्टिग एवं प्रो. एलेनबर्गर द्वारा तथा मेन्डेलसोन द्वारा प्रतिपादित किये गये अध्ययनों के परिणामों में जहाँ एक ओर समरूपता पायी जाती है वहीं दूसरी ओर उनमें प्रयुक्त पदों भिन्नता भी पायी जाती है। प्रो. वान हेन्टिग जिसे "कर्त्ता उत्पीड़ित " कहते हैं उसे मेन्डेलसोन ने "दाण्डिक युग्म" कहा है और वॉन हेन्टिग एवं मेडेलसोन जिसे "उत्पीड़नशास्त्र" कहते हैं एलेनबर्गर ने उसे "उत्पीड़न–उत्पत्ति" नाम से सम्बोधित किया है। यहाँ यह उल्लेख है कि वान हेन्टिग जहाँ एक ओर अपराधशास्त्री थे, मेन्डेलसोन बैरिस्टर (विधिवक्ता), किन्तु अपराधशास्त्र के विशेषज्ञ थे, वहीं दूसरी ओर एलेनबर्गर एक मनोचिकित्सक थे। इस प्रकार इन तीनों लेखकों का प्रशिक्षण एक–दूसरे से पूर्णतया भिन्न था।

अपराधशास्त्र में उत्पीड़ित व्यक्तियों का वैज्ञानिक अध्ययन करने के सन्दर्भ में अभी हाल में ज्ञान की एक नयी शाखा के रूप में उत्पीड़नशास्त्र का अन्वेषण हुआ है। ज्ञान की इस नयी शाखा के अन्तर्गत जहाँ एक ओर आपराधिक व्यक्ति एवं उत्पीड़ित व्यक्ति के अन्तर्सम्बन्धों एवं अन्तर्क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है, वहीं दूसरी ओर उत्पीड़ित व्यक्तियों एवं अपराधिक न्याय व्यवस्था, जैसे पुलिस, अदालत और दण्डात्मक या सुधारात्मक संस्थाओं तथा अन्य सामाजिक समूहों एवं संस्थाओं के संयोजनों के अन्तर्सम्बन्धों एवं अन्तर्क्रियाओं का भी अध्ययन किया जाता है। इस विषय के अन्तर्गत यह जानने का प्रयास किया जाता है कि उत्पीड़ित व्यक्तियों को किस प्रकार क्षतिग्रस्त किया जाता है, उनको सताया जाता है, उनका शोषण किया जाता है, उनको परकीकृत किया जाता है, उन्हें गाली दी जाती है, उनसे चालाकी से मतलब सिद्ध किया जाता है, उन्हें सहयोजित किया जाता है एवं उन्हें नीचा दिखाया जाता है, इत्यादि। इस अनुशासन का एक दूसरा स्वरूपं उस कौतूहल या जिज्ञासा से है कि उत्पीड़ितों को किस प्रकार सामर्थ्यवान, शक्तिमान बनाया जा सकता है, उन्हें किस प्रकार पुनर्वासित किया जा सकता है, उन्हें किस प्रकार शिक्षित किया जा सकता है एवं आदर की दृष्टि से देखा जा सकता है।

अनुरूपी लेखक / संयुक्त लेखक

आक्सफोर्ड डिक्शनरी ऑफ सोशियोलॉजी के अनुसार "उत्पीड़नशास्त्र अपराध से उत्पीड़ित व्यक्तियों का अध्ययन है। इसके अन्तर्गत अपराध के प्रतिमानों, घटना के स्थान, उत्पीड़ित व्यक्ति एवं अपराधी के बीच की विशेषताओं एवं सम्बन्धों, तथा इसके समान पक्ष अन्तर्विष्ठ हैं।"[1]

उत्पीड़नशास्त्र की विषयवस्तु को निम्नलिखित तीन विस्तृत क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है :

1. **प्रथमतः** अपराध के कारण के रूप में उत्पीड़नशास्त्र,
2. **द्वितीयतः** स्वार्थ समूह के रूप में उत्पीड़ित व्यक्तियों का विस्तार एवं
3. **तृतीयतः** उत्पीड़ित व्यक्तियों का न्याय परिप्रेक्ष्य।

अपराध की कारणता की व्याख्या के रूप में उत्पीड़नशास्त्र का सम्बन्ध अपराध में उत्पीड़ित व्यक्ति की सहभागिता के संघात अथवा अपराध–सम्पादन में उत्पीड़ित व्यक्ति की भूमिका से है। अन्य शब्दों में, अपराध के घटना में उत्पीड़ित व्यक्ति प्रत्यक्षतः या परोक्षतः किस प्रकार सहयोग या मदद करता है, इसका उद्घाटन उत्पीड़नशास्त्र करता है। इस प्रकार अपराधिक कारणता की व्याख्या करने में केवल अपराधी व्यक्ति के आचरण का आधार प्रस्तुत करने के बजाय स्वयं उत्पीड़ित व्यक्ति के आचरण पर ध्यान संकेन्द्रित करने से अपराध की कारणता की सम्यक् व्याख्या की जा सकती है, ऐसी मान्यता है उत्पीड़नशास्त्र की।

उत्पीड़नशास्त्र के द्वितीय क्षेत्र के अन्तर्गत यह दर्शाया जाता है कि अपराधिक कृत्यों के घटना में उत्पीड़ित व्यक्ति के स्वार्थों का एक विस्तृत परिक्षेत्र है। इन स्वार्थों या हितों की वैधानिक एवं नैतिक तुष्टि का उत्पाद है अपराध।

उत्पीड़िनशास्त्र के तृतीय क्षेत्र के अन्तर्गत उत्पीड़ित व्यक्तियों से सम्बद्ध न्याय परिप्रेक्ष्य को अन्तर्विष्ट किया गया है। इसके अन्तर्गत उत्पीड़न न्याय के विधिशास्त्रीय आधारों को अन्तर्निहित किया जाता है। उत्पीड़ित न्याय के विधिशास्त्रीय आधारों पर उत्पीड़ित व्यक्तियों के अधिकारिक अपराधिक न्याय व्यवस्था या इसके अधिकारियों या कार्यकर्त्ताओं से उन्हें न्याय दिलाने का प्रयास किया जाता है।

उत्पीड़नशास्त्र के ये विषय क्षेत्र एक–दूसरे से अन्तर्सम्बन्धित हैं। अपराध की कारणात्मक व्याख्या, उत्पीड़ित व्यक्तियों का स्वार्थ या हित समूह एवं न्याय क्षेत्र ये तीनों ही उत्पीड़नशास्त्र की विषयवस्तु है।

क्या अपराधिक कृत्यों के घटना में उत्पीड़ित व्यक्तियों की भी भूमिका होती है? क्या उत्पीड़ित व्यक्ति के लिए प्रत्यक्षतः या परोक्षतः उत्तेजित करता है ? क्या उत्पीड़ित व्यक्ति का ज्वालामुखी स्वभाव किसी व्यक्ति को अपराध करने के लिए या कानून का उल्लंघन करने की चुनौती देता है ? डॉ. हन्स वॉन हेन्टिग ने सन् 1948 में अपनी पुस्तक "दि क्रिमिनल ऐण्ड हिज विक्टिम" में सर्वप्रथम इस तथ्य को स्वीकार किया है कि आपराधिक कृत्यों के घटन में उत्पीड़ित व्यक्ति की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। विभिन्न अपराधों में से दो प्रकार के अपराधों, विशेषकर बलात्कार (रेप) और नैतिकता के विरुद्ध अन्य अपराधों में कुछ अंशों तक अधिक महनीय भूमिका पायी जाती है।[2]

सन् 1954 में डॉ. हेनरी एलेनबर्गर ने भी हन्स वान हेन्टिग के उपर्युक्त मत का जोरदार समर्थन करते हुए अपराधी व्यक्ति और उत्पीड़ित व्यक्ति के मनोवैज्ञानिक सम्बन्धों के अपने अध्ययन में इस तथ्य को उद्घाटित किया कि अपराधी और उत्पीड़ित व्यक्ति के बीच एक मनोवैज्ञानिक अन्तर्क्रियात्मक सम्बन्ध पाया जाता है। अतः अपराधिक कृत्यों के घटना में न केवल अपराधी व्यक्ति ही दोषी होता है, बल्कि उत्पीड़ित व्यक्ति भी कभी–कभी समान रूप से उतना ही दोषी होता है। अतः सभी उत्पीड़ित व्यक्ति निर्दोष व्यक्ति नहीं होते, उनमें से प्रायः अधिकांश दोषी होते हैं।[3]

मेन्डेलसोन ने भी अपने एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण शोध लेख **"दि ओरिजिन ऑफ विक्टिमॉलॉजी"** में यह उद्गार व्यक्त किया है कि अवलोकनों के आधार पर निश्चित रूप से यह कहा जा सकता है कि किसी न किसी रूप में उत्पीड़ित व्यक्ति अपराधिक व्यक्ति को अपराध कराने के लिए उत्तेजित अवश्य करता है।[4]

शुल्ज ने सन् 1968 में अपनी रचना " क्राइम इन डेलिन्क्वेसी" में इस सम्बन्ध में अपना उदगार व्यक्त करते हुए लिखा है कि उत्पीड़ित और आक्रामक पद बहुधा परस्पर विनिमेय हैं तथा अपराधिक कारणों में अपराधी व्यक्ति की अपेक्षा उत्पीड़ित व्यक्ति की अधिक महनीय भूमिका होती है।[5]

शुल्ज के अनुसार एक उत्पीड़ित व्यक्ति अपराधिक व्यक्ति को अपराध करने के लिए निम्नलिखित रूप में अभिप्रेरित करता है :

1. अपराधी में प्रत्यक्षतः उत्तेजन तथा विरोधात्मक प्रतिक्रिया की सृष्टि करना– अवलोकनों के आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि प्रायः उत्पीड़ित व्यक्ति स्वयं स्वतन्त्र रूप में अपराधी व्यक्ति के आगे आता है और अपनी विरोधात्मक प्रतिक्रियाओं की चिनगारियों से अपराधी व्यक्ति को वेधित करता है। ये विरोधात्मक प्रतिक्रियाओं की चिनगारियाँ अपराधी व्यक्ति को अपराध करने की प्रेरणा प्रदान करने में अधिक प्रभावशाली सिद्ध होती हैं। उदाहरणस्वरूप, दो व्यक्तियों में उत्तेजित वाद–विवाद के मध्य यदि एक निहत्था व्यक्ति दूसरे के हाथ में किसी जानलेवा अस्त्र–शस्त्र को देखकर भी ओजस्वी शब्दों में यह कहे कि "**यदि अपनी माँ का दूध पीये हो तो इससे मुझ पर प्रहार करो"** और यदि इस चुनौती को स्वीकार करके दूसरा व्यक्ति वास्तव में अपने अस्त्र–शस्त्र से चुनौती देने वाले व्यक्ति पर प्रहार कर देता है तब इसे उत्पीड़ित व्यक्ति द्वारा अपराधी को प्रत्यक्ष उत्तेजित करना ही कहा जाएगा।

2. किसी दूसरे व्यक्ति को परोक्ष रूप से अपराध करने के लिये उत्तेजित करना– यह कोई आवश्यक नहीं है कि कोई व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से ही किसी दूसरे व्यक्ति को अपराध करने के लिए उत्प्रेरित करे। कभी–कभी परोक्ष रूप से भी किसी अन्य व्यक्ति को अपराध करने के लिए उत्तेजित किया जा सकता है। यथा, यदि कोई व्यक्ति अप्रत्यक्ष रूप से अपनी विरोधात्मक भावनाओं का उद्रेक किसी अन्य शक्तिशाली व्यक्ति के प्रति रोषयुक्त सबल भाषा में करता है तो निश्चित रूप से वह उस सशक्त व्यक्ति को अपराध करने का आमंत्रण देता है। कहा भी गया है कि **"अतिसंघर्षण करे जो कोई। अनल प्रगट चन्दन ते होई।।"** परोक्ष रूप से किसी सशक्त व्यक्ति के विरोध में अपनी धाक या कीर्तिगाथाओं या गौरव पराक्रम तथा अपने विरोधी पक्ष की कटु या घोर भर्त्सना एवं आलोचनात्मक शब्दावली का प्रयोग करना जंग का वातावरण उत्पन्न करना है।

3. सामान्य निरोधात्मक उपायों की उपेक्षा करना– किसी व्यक्ति द्वारा सामान्य निरोधक उपायों की अवज्ञा करने से भी किसी अन्य व्यक्ति को अपराध करने का सुअवसर मिलता है। उदाहरणस्वरूप, यदि कोई व्यक्ति अपने साइकिल या स्कूटर या कार बिना ताला लगाये हुए किसी सार्वजनिक स्थल पर खुला छोड़कर अन्य कार्यों के सम्पादन में लग जाए, तो ऐसी स्थिति में किसी चोर को उसकी चोरी करने का अवश्य ही एक अच्छा मौका मिलेगा। इसी प्रकार विद्यार्थियों को परीक्षा भवन में पुस्तकों को ले जाने की छूट दी जाएगी तो अवश्यमेव वहाँ उन्हें नकल करने का सुयोग मिलेगा। इसी तरह यदि कोई सेठ अपने एक लोभी नौकर के सामने रुपया

और आभूषण आदि आलमारी में रखे व निकाले एवं उसी के सामने चाभी अपनी गद्दी के नीचे रखे तो सुअवसर मिलने पर वह लोभी नौकर अपनी तकदीर चमकाने के लिए अवश्यमेव आलमारी से रुपये व आभूषण लेकर अन्यत्र पलायित हो सकता है ।

4. संवेगात्मक रूप से व्याधिग्रस्त व्यक्ति को उत्तेजित कर अपराधोत्पादन की प्ररेणा देना– संवेगात्मक रूप से व्याधिग्रस्त व्यक्ति सामान्य व्यक्ति से भिन्न होते हैं। ऐसे व्यक्तियों को भावोत्तेजक भावों से ग्रस्त कर अपराधजनित कृत्य करने के लिए सहज ही में बाध्य दिया जा सकता है। कभी–कभी ऐसे व्यक्ति को मात्र चिढ़ाने, छेड़ने, तंग करने या परेशान करने वाले व्यक्ति को आहत होना पड़ता है। निःसन्देह मात्रात्मक रूप से मनोविकृत व्यक्ति को छेड़ने मात्र से अपराध करने के प्रबल मनोवेगों के स्पष्ट दर्शन किये जा सकते हैं। भावों की विघटनात्मक भूमिका निभाने में उन्हें छेड़ने का जो बेमिसाल कमाल हासिल है, उसकी जितनी भर्त्सना की जाये, उतनी थोड़ी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Oxford Dictionary of Sociology, Edited Gordon Marshall, Oxford University Press, Oxford, New York, 1998, p. 693.
2. Hans von Henting The Criminal and His Victim, Yale University, Press, New Haven, 1948.
3. Henry Ellenberger, ″Relations psychologiques entre le Criminel et La victime″, Revue international de Criminologie et de police technique, Vol. VII, No. 2 April-June-1954. P. 121, Translated from the French.
4. B. Mendelsohn, ″The Origin of Victimology, Excerpta Criminologica, Vol. 3, May-June, 1963, pp. 239-241.
5. Le Roy G. Schultz, Crime in Delinquency, April 1968, New York, Vol. 14, p. 137.

*****